श्रीदत्तकसूनुमहाकविमाघप्रणीतं

शिशुपालवधमहाकाव्यम्

शुद्धम्
सरलम्
सुन्दरम्

विविधपाठान्तरसहितः
सप्रसङ्गमूलपाठः

NET/PGT
GIC/GGIC/GDC
IAS & OTHER
COMPETITIVE
EXAMS

{कृष्णनारदसम्भाषणं नाम प्रथमः सर्गः}



परिष्कर्त्ता परिकल्पनाकारश्च-:

डॉ. श्रीओमशर्मा (सहायकाचार्यः)
व्याकरणविभागः, केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः
श्रीरघुनाथकीर्तिपरिसरः, देवप्रयागः (उत्तराखण्डः)



अक्षरसंयोजनम्-:

श्री शुभम शर्मा (छोटू)
(शोधच्छात्रः)

ई-बुक्-संस्करणम्— प्रथमम्; आश्विन-नवरात्रम् (विक्रमसंवत्-२०७९) ख्रिस्ताब्दः- 2022.09.26

स्थानम्— देवप्रयागः, पौड़ी-गढ़वालम्, उत्तराखण्डः-२४९३०१

मूल्यम्— अमूल्यम्

अस्माकं सम्पर्कसूत्राणि—

 e-mail अणुवाक्—: samskritsaarah@gmail.com

 ह्वाट्सैप्— ८८९९१८७९२९ (भवतां परामर्शानां स्वागतम्)



— संस्कृतसारः @sanskrit sar

 FACEBOOK— @sanskrit_shiksha संस्कृतशिक्षा

Title:— शिशुपालवधम् (shishupalavadham)

Author's name:— Mahakavi Magha

Editor's name:— Shriom Sharma

Published by:— Self Published by Sanskrit sar

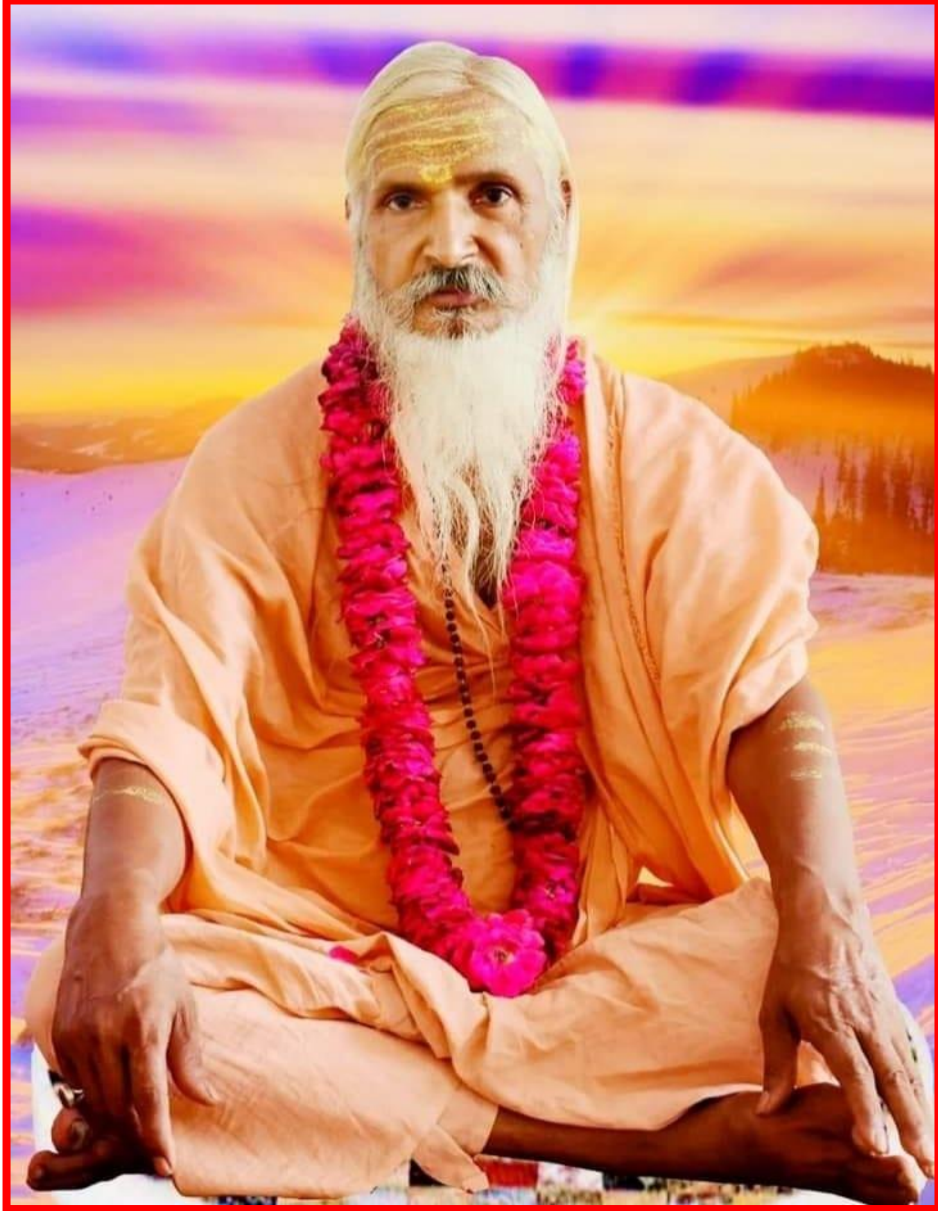
Publisher 's Address:— CSU Shri Raghunath Kriti Parisar, Devaprayag, Pauri-garhwal, Uttarakhand-249301

Printer's Details :— E-book

Edition Details:— I

E-ISBN :— --------

समर्पणम्



स्वामी श्री महानन्द ब्रह्मचारी जी महाराज

संस्थापक— रुक्मिणी वल्लभ धाम, अवन्तिका देवी, बुलन्दशहर, उ.प्र.

गायत्रीमखदत्तजीवनहविर्गोब्राह्मणश्रेयसां
विद्यादानजुषां शिवक्रतुयुजामानन्दलोकात्मनाम्।
श्रीओमेण समर्प्यते यतिमहानन्दाख्यपुण्यात्मनां
माघस्याद्य परिष्कृतं सुखकृतं रूपं हि हस्ताब्जयोः॥



प्रास्ताविकम्

अस्य संस्करणस्य आवश्कता —

अब परीक्षाओं का स्तर ऐसा हो गया है जिसमें मूल श्लोकों को लेकर भीतर से प्रश्न पूछे जाते हैं । एतदर्थ हमें ऐसे संस्करण की आवश्यकता थी जिसमें 'शिशुपालवधम्' प्रथमसर्ग का केवल मूलपाठ दिया गया हो ताकि अधिक पेज पलटने का श्रम न हो, जिससे ग्रन्थ को कण्ठस्थ किया जा सके , लेकिन बाद में ध्यान आया केवल 'तोता-रटन्त' से भी ज्यादा लाभ नहीं होता। यह बात स्पष्ट होनी चाहिए कि कम से कम श्लोक में किसके बारे में क्या कहा जा रहा है । पाठ करते-करते यह पता चल जाए इसलिए प्रत्येक श्लोक का प्रसङ्ग भी शुरुआत में जोड़ दिया गया है । वैसे श्लोक के सम्पूर्ण अर्थ-ज्ञान के लिए अन्य सरल व्याख्याएँ उपलब्ध हैं । इसलिए श्लोकों की व्याख्या का समावेश हम यहाँ नहीं कर रहे हैं ।

अस्य पाठस्य वैशिष्ट्यम्—

- दक्षिणात्य-संस्करण या निर्णयसागर प्रेस के संस्करण में या अन्यत्र जहाँ भी हमें पाठभेद मिला उसको हमने टिप्पणी में अलग से दर्शा दिया है , जिससे किसी भी प्रदेशवासी के लिए यह संस्करण अतीवोपयोगी बन सके , किन्तु हमने अपने संस्करण के मूल पाठ में 'शिशुपालवधम्' के प्रसिद्ध टीकाकार महामहोपाध्याय श्रीमल्लिनाथ ने जो पाठ स्वीकार किया है, उसी पाठ को प्राथमिकता दी है। यथा श्लोक संख्या तीन में देखें—

  चयस्त्विषामित्यवधारितं पुरा यहाँ पर **'पुरा'** एवं **'पुरस्'** दोनों ही पाठ मिलते हैं लेकिन सर्वङ्कषाकार श्रीमल्लिनाथ ने **'पुरा'** पाठ माना है , अतः हमने भी अपने मूल में **'पुरा'** पाठ ही दिया है।

- इस ग्रन्थ के प्रथम-सर्ग में वंशस्थ-छन्द का प्रयोग किया गया है । जिसकी यति (जिह्वा विश्रान्ति स्थान) १२-१२ अक्षरों पर होती है । श्लोकोच्चारण करते समय आप १२वें अक्षर पर रुकें। एतदर्थ हमने प्रत्येक श्लोक के चारों चरणों को चार अलग-अलग पङ्क्तियों में कर दिया है तथा साथ ही पादान्त में विभक्ति के अर्धाक्षर को पूर्व-पद के साथ ही जोड़ दिया है, जिससे छात्र वर्ग को शुद्ध उच्चारण करने तथा अर्थावगति में भी सरलता होगी । यथा —

अथ प्रयत्नो न्नमिताऽऽनमत्फणैर्
धृते कथञ्चित्फणिनां गणैरधः ।
न्यधायिषातामभिदेवकीसुतं
सुतेन धातुश्चरणौ भुवस्तले ॥ १३ ॥

यहाँ पर आप देख सकते हैं **'फणैर्- धृते'** में रेफ जो पूर्वपद में स्थित है जिसका उत्तरपद **'धृते'** के धकार पर ऊर्ध्वगमन नहीं किया, ताकि **'फणैर्'** पूर्वपद सविभक्तिक ही दिखाई दे। अन्यच्च—

करोति कंसादिमहीभृतां वधाज्
जनो मृगाणामिव यत्तव स्तवम्।
हरे! हिरण्याक्षपुरःसरासुर-
द्विपद्विषः प्रत्युत सा तिरस्क्रिया॥३९॥

ऐसे स्थलों पर सविभक्ति **'वधाज्'** पादान्त पदों के कृतसन्धि अर्धाक्षर को अन्य संस्करणों की भांति अग्रिम पाद के साथ **'वधाज्जनो'** इस प्रकार से नहीं जोड़ा गया है, बल्कि **'वधाज्'** इस सविभक्तिक को एक साथ कर अग्रिम पाद के **'जनो'** को नई पङ्क्ति से आरम्भ किया गया है जिससे उच्चारण में सौकर्य हो। इस प्रकार आपको हमारे संस्करण में सर्वत्र ऐसा पाठ देखने को मिलेगा।

- ❖ यद्यपि इस संस्करण को हमने परिशुद्धतम तैयार किया है, फिर भी मानव-स्वभावजन्य कोई त्रुटि आपको परिलक्षित हो तो हम आपके विचारों का 8899187929 इस ह्वाट्सैप या इस samskritsaarah@gmail.com ई-मेल पर स्वागत करते हैं।
- ❖ यह ई-बुक् संस्करण है, अतः टेबलेट इत्यादि डिवाइस द्वारा इसे पढ़ने पर अच्छा अनुभव मिलेगा, अथवा आँखों की अच्छी सेहत के लिए कलर-प्रिंट लेकर पढ़ने में अच्छा अनुभव प्राप्त होगा।
- ❖ इस संस्करण के संस्कृत पाठ-सम्पादन संबन्धित कई महत्वपूर्ण सुझाव प्रो. विजयपाल शास्त्री जी (साहित्यविभागाध्यक्ष केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय श्री रघुनाथकीर्ति परिसर, देवप्रयाग) ने दिये हैं तथा इसी परिसर के हिंदी विभाग के सहायकाचार्य डॉ. वीरेन्द्र सिंह बर्त्वाल जी ने इस संस्करण में प्रयुक्त हिंदी वाक्यों को परिशुद्धता प्रदान की है, एतदर्थ हम दोनों महानुभावों के चिर कृतज्ञ रहेंगे।
- ❖ इस संस्करण में हमने निम्नलिखित ग्रन्थों से पाठान्तर पाठसंशोधन इत्यादि में पर्याप्त सहायता ली गई है, एतदर्थ हम इन व्याख्याकारों या सम्पादकों के सदैव ऋणी रहेंगे —

सहायकग्रन्थाः

व्याख्याकारः/ सम्पादकः	प्रकाशकः	संस्करणम्	वर्षम्
तारिणीशझा	रामनारायणलाल- विजयकुमारः	प्रथमम्	२०२०
जनार्दनशास्त्री	मोतीलाल-बनारसीदासः	द्वितीयम्	२०१२
हरगोविन्द शास्त्री	चौखम्बाविद्याभवनम्	पुनर्मुद्रितम्	२०१५
सी. राजेन्द्रः	साहित्य-अकादमी	प्रथमम्	२०१८
शिवदत्त दाधिमथः	निर्णयसागरः मुम्बई	सप्तमम्	१९१७
डॉ. गजाननशास्त्री मुसलगाँवकरः	चौखम्बासंस्कृतभवनम् वाराणसी	प्रथमम्	वि०सं० २०५५

****

शिशुपालवधम्



प्रथमः सर्गः

✡ वस्तुनिर्देशात्मक मङ्गलाचरण एवं श्रीकृष्ण द्वारा आकाश से उतरते हुए मुनि नारद को देखने का वर्णन—

श्रियः पतिः श्रीमति शासितुं जगज्
जगन्निवासो वसुदेवसद्मनि ।
वसन् ददर्शावतरन्तमम्बराद्
हिरण्यगर्भाङ्गभुवं मुनिं हरिः ॥ १॥

✡ सर्वप्रथम भगवान् कृष्ण ने नारद को आकाशमार्ग से आते हुए देखा। तदनन्तर नगरवासी उन्हें विस्मयपूर्वक देखने लगे—

गतं तिरश्चीनमनूरुसारथेः
प्रसिद्धमूर्ध्वज्वलनं हविर्भुजः ।
पतत्यधो धाम विसारि सर्वतः
किमेतदित्याकुलमीक्षितं जनैः ॥ २ ॥

✡ लोगों के द्वारा आकुलता पूर्वक देखे जाने पर भगवान् ने उन्हें नारद समझा—

चयस्त्विषामित्यवधारितं पुरा[1]
ततः शरीरीति विभाविताकृतिम् ।
विभुर्विभक्तावयवं पुमानिति
क्रमादमुं नारद इत्यबोधि सः ॥ ३ ॥

✡ अब यहाँ से सात श्लोकों में (अर्थात् चौथे से दसवें श्लोक तक) नारद मुनि का वर्णन किया गया है।
उनकी उपमा सर्वप्रथम शिव से देते हैं —

नवानधोऽधो बृहतः पयोधरान्
समूढकर्पूरपरागपाण्डुरम् ।
क्षणं क्षणोत्क्षिप्तगजेन्द्रकृत्तिना
स्फुटोपमं भूतिसितेन शम्भुना ॥ ४ ॥

✡ इस श्लोक में महर्षि नारद की तुलना हिमालय से की गई है —

दधानमम्भोरुहकेसरद्युतीर्
जटाः शरच्चन्द्रमरीचिरोचिषम् ।
विपाकपिङ्गास्तुहिनस्थलीरुहो
धराधरेन्द्रं व्रततीततीरिव ॥ ५ ॥

✡ यहाँ नारद मुनि का साम्य बलराम से प्रदर्शित किया है—

पिशङ्गमौञ्जीयुजमर्जुनच्छविं
वसानमेणाजिनमञ्जनद्युति ।
सुवर्णसूत्राकलिताधराम्बरां
विडम्बयन्तं शितिवाससस्तनुम् ॥ ६ ॥

✡ इस श्लोक में नारद जी की समानता शरत्काल में विद्युत्पुञ्ज से युक्त शुभ्र मेघ से की गई है—

विहङ्गराजाङ्गरुहैरिवायतैर्
हिरण्मयोर्वीरुहवल्लितन्तुभिः ।
कृतोपवीतं हिमशुभ्रमुच्चकैर्
घनं घनान्ते तडितां गणैरिव[2] ॥ ७ ॥

✡ झूल से सुशोभित इन्द्रवाहन ऐरावत से नारद का साम्य वर्णन किया है—

निसर्गचित्रोज्ज्वलसूक्ष्मपक्ष्मणा
लसद्बिसच्छेदसिताङ्गसङ्गिना ।
चकासतं चारुचमूरुचर्मणा
कुथेन नागेन्द्रमिवेन्द्रवाहनम् ॥ ८ ॥

✡ नारद मुनि अपने हाथ में स्फटिक की अक्षमाला लिए हुए हैं । उस पर रक्त अङ्गुष्ठ का प्रकाश पड़ने से ऐसा प्रतीत होता है मानो मूँगे की माला ही धारण किये हों—

अजस्रमास्फालित[3]वल्लकीगुण-
क्षतोज्ज्वलाङ्गुष्ठनखांशुभिन्नया ।
पुरः प्रवालै[4]रिव पूरितार्धया
विभान्तमच्छस्फटिकाक्षमालया ॥ ९ ॥

✡ भगवान् कृष्ण ने अपनी 'महती' नामक वीणा का (जिसमें ग्राम और मूर्च्छनाएँ स्पष्ट हो रही हैं) बार-बार अवलोकन करते हुए नारद मुनि को देखा —

रणद्भिराघट्टनया नभस्वतः
पृथग्विभिन्नश्रुतिमण्डलैः स्वरैः ।
स्फुटीभवद्ग्रामविशेषमूर्च्छनाम्
अवेक्षमाणं महतीं मुहुर्मुहुः ॥ १० ॥

✡ नारद जी अपने पीछे आते हुए देवताओं को लौटाकर भगवान् श्रीकृष्ण के निवासस्थान पर पहुँचते हैं —

[1] 'पुरस्' इति पाठान्तरम् ।
[2] 'गुणैरिव' इति पाठान्तरम् ।
[3] 'माश्रावित' इति पाठान्तरम् ।
[4] 'प्रचालै' इति पाठान्तरम् ।

निवर्त्य सोऽनुव्रजतः कृतानतीन्
अतीन्द्रियज्ञाननिधिर्नभःसदः।
समासदत् सादितदैत्यसम्पदः
पदं महेन्द्रालयचारु चक्रिणः ॥ ११ ॥

✡ भगवान् श्रीकृष्ण ने नारद जी के भूमि पर आने के पूर्व अपने आसन से उठकर उनका स्वागत किया —

पतत्पतङ्ग[1]प्रतिमस्तपोनिधिः
पुरोऽस्य यावन्न भुवि व्यलीयत।
गिरेस्तडित्वानिव तावदुच्चकैर्
जवेन पीठादुदतिष्ठदच्युतः ॥ १२ ॥

✡ महाकवि माघ नारद जी के पृथ्वी पर पैर रखने का वर्णन करते हैं —

अथ प्रयत्नो[2]न्नमिताऽऽनमत्फणैर्
धृते कथञ्चित्फणिनां गणैरधः।
न्यधायिषातामभिदेवकीसुतं
सुतेन धातुश्चरणौ भुवस्तले ॥ १३ ॥

✡ इसके अनन्तर आदिपुरुष भगवान् श्रीकृष्ण ने पूजार्ह नारद का विधिपूर्वक पूजन किया—

तमर्घ्यमर्घ्या[3]दिकयाऽऽदिपूरुषः
सपर्यया साधु स पर्य्यपूपुजत्।
गृहानुपैतुं प्रणयादभीप्सवो
भवन्ति नाऽपुण्यकृतां मनीषिणः ॥ १४ ॥

✡ इस श्लोक में कवि भगवान् श्रीकृष्ण के द्वारा नारद जी को आसन प्रदान करने का वर्णन करते हैं—

न यावदेतावुदपश्यदुत्थितौ
जनस्तुषाराञ्जनपर्वताविव[4]।
स्वहस्तदत्ते मुनिमासने मुनिश्
चिरन्तनस्तावदभिन्यवीविशत् ॥ १५॥

✡ नीलपर्वत के समान श्रीकृष्ण के सम्मुख आसन पर स्थित नारद जी ने उदयाचल पर आरूढ़ चन्द्रमा की शोभा को धारण किया —

महामहानीलशिलारुचः पुरो
निषेदिवान् कंसकृषः स विष्टरे।
श्रितोदयाद्रेरभिसायमुच्चकैर्
अचूचुरच्चन्द्रमसोऽभिरामताम् ॥ १६ ॥

✡ नारद जी के यथाविधि पूजन के पश्चात् भगवान् श्रीकृष्ण की प्रसन्नता का कवि वर्णन कर रहा है —

विधाय तस्यापचितिं प्रसेदुषः
प्रकाममप्रीयत यज्वनां प्रियः।
ग्रहीतुमार्यान् परिचर्यया मुहुर्
महानुभावा हि नितान्तमर्थिनः ॥ १७॥

✡ नारदजी ने अपने कमण्डलु में रखे हुए समस्त तीर्थों के जल से श्रीकृष्ण का अभिषेक किया तथा भगवान् श्रीकृष्ण ने उसे नम्रतापूर्वक सिर झुकाकर ग्रहण किया—

अशेषतीर्थोपहृताः कमण्डलोर्
निधाय पाणावृषिणाभ्युदीरिताः।
अघौघविध्वंसविधौ पटीयसीर्
नतेन मूर्ध्ना हरिरग्रहीदपः ॥ १८॥

✡ नारद मुनि की आज्ञा से भगवान् श्रीकृष्ण जिस सुवर्णमय आसन पर विराजमान हुए उसका वर्णन कवि कर रहा है—

स काञ्चने यत्र मुनेरनुज्ञया
नवाम्बुद[5]श्यामवपुर्न्यविक्षत।
जिगाय जम्बूजनितश्रियः श्रियं
सुमेरुशृङ्गस्य तदा तदासनम् ॥ १९॥

✡ यहाँ कवि आसनोपविष्ट कृष्ण की समुद्र से क्षमता प्रदर्शित करते हुए कहते हैं—

स तप्तकार्तस्वरभास्वराम्बरः
कठोरताराधिपलाञ्छनच्छविः।
विदिद्युते वाडवजातवेदसः
शिखाभिराश्लिष्ट इवाम्भसां निधिः ॥ २०॥

✡ इस श्लोक में नारद जी के कान्ति की हरि के श्यामल किरणों से मिश्रित होने का वर्णन है—

---

[1] 'पतन् पतङ्ग' इति पाठान्तरम्।
[2] 'प्रयत्ने' इति पाठान्तरम्।
[3] 'तमर्घ्यमर्घ्या' इति पाठान्तरम्।
[4] 'पर्वताकृती' इति पाठान्तरम्।
[5] 'नवाम्बुज' इति पाठान्तरम्।

रथाङ्गपाणेः पटलेन रोचिषाम्
ऋषित्विषः संवलिता विरेजिरे ।
चलत्पलाशान्तरगोचरास्तरोस्
तुषारमूर्तेरिव नक्तमंशवः ॥ २१ ॥

✡ यहाँ पर कवि भगवान श्रीकृष्ण और नारदजी के श्यामल और गौरवर्ण किरणों के सम्मिश्रण से एकवर्णत्व का वर्णन करता है—

प्रफुल्लतापिच्छनिभैरभीषुभिः
शुभैश्च सप्तच्छदपांशुपाण्डुभिः ।
परस्परेणच्छुरितामलच्छवी
तदैकवर्णाविव तौ बभूवतुः ॥ २२॥

✡ कवि वर्णन कर रहा है कि महर्षि नारद के समागम से भगवान श्रीकृष्ण को इतना हर्ष हुआ कि वह समा नहीं सका—

युगान्तकालप्रतिसंहृतात्मनो[१]
जगन्ति यस्यां सविकासमासत ।
तनौ ममुस्तत्र न कैटभद्विषस्
तपोधनाभ्यागमसम्भवा मुदः ॥ २३॥

✡ प्रस्तुत श्लोक में भगवान् श्रीकृष्ण के 'पुण्डरीकाक्ष' नाम की सार्थकता बताई है—

निदाघधामानमिवाधिदीधितिं
मुदा विकासं मुनि[२]मभ्युपेयुषी ।
विलोचने बिभ्रदधिश्रितश्रिणी
स पुण्डरीकाक्ष इति स्फुटोऽभवत् ॥ २४॥

✡ इसके पश्चात् भगवान् श्रीकृष्ण का नारदजी से वार्तालाप का वर्णन किया जा रहा है—

सितं सितिम्ना सुतरां मुनेर्वपुर्
विसारिभिः सौधमिवाथ लम्भयन् ।
द्विजावलि[३]व्याजनिशाकरांशुभिः
शुचिस्मितां वाचमवोचदच्युतः ॥ २५॥

✡ भगवान् श्रीकृष्ण के मुख से नारदजी के दर्शन का महत्त्व बतलाया गया है—

हरत्यघं सम्प्रति हेतुरेष्यतः
शुभस्य पूर्वाचरितैः कृतं शुभैः ।
शरीरभाजां भवदीयदर्शनं
व्यनक्ति कालत्रितयेऽपि योग्यताम् ॥ २६॥

✡ प्रस्तुत श्लोक में श्रीकृष्ण जी नारदमुनि से कह रहे हैं कि आपका तेज स्रहस्त्रों सूर्य के तेज से भी बढ़कर है—

जगत्यपर्याप्तसहस्रभानुना
न यन्नियन्तुं समभावि भानुना ।
प्रसह्य तेजोभिरसङ्ख्यतां गतैर्
अदस्त्वया नुन्नमनुत्तमं तमः ॥ २७॥

✡ यहाँ पर भगवान् श्रीकृष्ण नारद जी को वेदों का अक्षयनिधि बतलाते हैं—

कृतः प्रजाक्षेमकृता प्रजासृजा
सुपात्रनिक्षेपनिराकुलात्मना ।
सदोपयोगेऽपि गुरुस्त्वमक्षयो[४]
निधिः श्रुतीनां धनसम्पदामिव ॥ २८॥

✡ श्रीकृष्ण जी नारद से कह रहे हैं कि आपके दर्शन से कृतकृत्य होकर भी मैं आपके सारगर्भित वचन सुनना चाहता हूँ—

विलोकनेनैव तवामुना मुने !
कृतः कृतार्थोऽस्मि निर्बर्हितांहसा[५] ।
तथापि शुश्रूषुरहं गरीयसीर्
गिरोऽथवा श्रेयसि केन तृप्यते ? ॥ २९॥

✡ प्रस्तुत श्लोक में भगवान् श्रीकृष्ण जी के आगमन का उद्देश्य पूछते हैं—

गतस्पृहोऽप्यागमनप्रयोजनं
वदेति वक्तुं व्यवसीयते यया ।
तनोति नस्तामुदितात्मगौरवो
गुरुस्तवैवागम एष धृष्टताम् ॥ ३०॥

✡ अब नारद जी उत्तर में अपना कथन आरम्भ करते हैं—

[१] 'संहृतात्मना' इति पाठान्तरम् ।
[२] 'यति' इति पाठान्तरम् ।
[३] 'द्विजावली' इति पाठान्तरम् ।
[४] 'क्षतिर्' इति पाठान्तरम् ।
[५] 'निर्बृंहितांहसा' इति पाठान्तरम् ।

इति ब्रुवन्तं तमुवाच स व्रती
न वाच्यमित्थं पुरुषोत्तम ! त्वया ।
त्वमेव साक्षात्करणीय इत्यतः
किमस्ति कार्य्यं गुरु योगिनामपि ॥ ३१॥

✡ ऊपर जो कहा गया है कि आप ही योगियों द्वारा साक्षात्करणीय हैं उसी का समर्थन करते हुए नारद जी कह रहे हैं—

उदीर्णरागप्रतिरोधकं जनैर्
अभीक्ष्णमक्षुण्णतयातिदुर्गमम् ।
उपेयुषो मोक्षपथं मनस्विनस्
त्वमग्रभूमिर्निरपायसंश्रया ॥ ३२॥

✡ नारद जी श्रीकृष्ण से कहते हैं कि कपिल आदि महर्षि प्रकृति से विविक्तरूप से वेद्य सांख्योक्त पुरुष आपको ही मानते हैं—

उदासितारं निगृहीतमानसैर्
गृहीतमध्यात्मदृशा कथञ्चन ।
बहिर्विकारं प्रकृतेः पृथग्विदुः
पुरातनं त्वां पुरुषं पुराविदः ॥ ३३॥

✡ इस प्रकार भगवान् के निर्गुणस्वरूप का वर्णन करके अब उपयोगी सगुण रूप का वर्णन आगे के ६ श्लोकों में करते हैं। सर्वप्रथम वराहावतार लेकर पृथ्वी के उद्धार का वर्णन किया गया है—

निवेशयामासिथ हेलयोद्धृतं[1]
फणाभृतां छादनमेकमोकसः ।
जगत्त्रयैकस्थपतिस्त्वमुच्चकैर्
अहीश्वरस्तम्भशिरःसु भूतलम् ॥ ३४॥

✡ प्रस्तुत श्लोक में श्रीकृष्ण की अपूर्व महिमा का नारदजी वर्णन कर रहे हैं—

अनन्यगुर्व्या[2]स्तव केन केवलः
पुराणमूर्तेर्महिमाऽवगम्यते ।
मनुष्यजन्माऽपि सुरासुरान्गुणैर्
भवान् भवच्छेदकरैः[3] करोत्यधः ॥ ३५॥

✡ नारद मुनि भगवान् श्रीकृष्ण से कह रहे हैं कि पृथ्वी का भार हलका करने के लिए आप अवतीर्ण होकर उसे अधिक भारवती बना रहे हैं—

लघूकरिष्यन्नतिभारभङ्गुराम्
अमूं किल त्वं त्रिदिवादवातरः ।
उदूढलोकत्रितयेन साम्प्रतं
गुरुर्धरित्री क्रियतेतरां त्वया ॥ ३६॥

✡ इस श्लोक में महर्षि नारद द्वारा प्रकारान्तर से श्रीकृष्ण के अवतार का महत्त्व वर्णन किया गया है—

निजौजसोज्जासयितुं जगद्द्रुहाम्
उपाजिहीथा न महीतलं यदि ।
समाहितैरप्यनिरूपितस्ततः
पदं दृशः स्याः कथमीश ! मादृशाम् ? ॥ ३७॥

✡ नारद जी कह रहे हैं हे श्रीकृष्ण ! दुष्टों को दमन करने की क्षमता आप में ही हैं दूसरे के द्वारा वह साध्य नहीं—

उपप्लुतं पातुमदो मदोद्धतैस्
त्वमेव विश्वम्भर! विश्वमीशिषे ।
ऋते रवेः क्षालयितुं क्षमेत कः
क्षपातमस्काण्डमलीमसं नभः ॥ ३८॥

✡ आपने जो कंस आदि अल्पपराक्रमी राजाओं का संहार किया है, वह अपार सामर्थ्यवाले आपकी प्रशंसा नहीं अपितु तिरस्कार है—

करोति कंसादिमहीभृतां वधाज्
जनो मृगाणामिव यत्तव[4] स्तवम् ।
हरे ![5] हिरण्याक्षपुरःसरासुर-
द्विपद्विषः प्रत्युत सा तिरस्क्रिया ॥ ३९॥

✡ इस प्रकार श्रीकृष्ण की प्रशंसा करने के पश्चात् महर्षि नारद अपने आगमन के प्रयोजन को बतलाने का उपक्रम करते हैं—

प्रवृत्त एव स्वयमुज्झितश्रमः
क्रमेण पेष्टुं भुवनद्विषामसि ।
तथापि वाचालतया युनक्ति मां
मिथस्त्वदाभाषणलोलुपं मनः ॥ ४०॥

[1] 'हेलयोद्धृतम्' इति पाठान्तरम् ।
[2] 'अनन्यगुर्वा' इति पाठान्तरम् ।
[3] 'भवोच्छेदकरः' इति पाठान्तरम् ।
[4] 'यस्तव' 'यमिति' वा पाठान्तरम् ।
[5] 'हरेर्' इति पाठान्तरम् ।

✡ नारदमुनि भगवान् श्रीकृष्ण से प्रार्थना करते हैं कि आप कृपया इन्द्र का सन्देश सुनें—

तदिन्द्रसन्दिष्टमुपेन्द्र ! यद्वचः
क्षणं मया विश्वजनीनमुच्यते ।
समस्तकार्येषु गतेन धुर्यताम्
अहिद्विषस्तद्भवता निशम्यताम् ॥ ४१॥

✡ नारदजी शिशुपाल को मारने के लिए भगवान् श्रीकृष्ण से आग्रह करते हैं कि वह अवध्य है केवल आपके द्वारा ही उसका वध हो सकता है। उसके पूर्व जन्म के पराक्रम का वर्णन करते हैं—

अभूदभूमिः प्रतिपक्षजन्मनां
भियां तनूजस्तपनद्युतिर्दितेः ।
यमिन्द्रशब्दार्थनिषूदनं हरेर्
हिरण्यपूर्वं कशिपुं प्रचक्षते ॥ ४२॥

✡ नारद जी कह रहे हैं कि हिरण्यकशिपु ने देवताओं के हृदय में भय का प्रथम प्रवेश कराया—

समत्सरेणासुर इत्युपेयुषा
चिराय नाम्नः प्रथमाभिधेयताम् ।
भयस्य पूर्वावतरस्तरस्विना
मनस्सु येन द्युसदां न्यधीयत[१] ॥ ४३॥

✡ प्रस्तुत इस लोक में हिरण्यकशिपु द्वारा दिक्पालों को जीतने का वर्णन किया जा रहा है—

दिशामधीशांश्चतुरो यतः सुरान्
अपास्य तं रागहृताः सिषेविरे ।
अवापुरारभ्य ततश्चला इति
प्रवादमुच्चैरयशस्करं श्रियः ॥ ४४॥

✡ हिरण्यकशिपु के भय से देवताओं ने दुर्ग आदि का निर्माण किया इसका वर्णन करते हैं—

पुराणि दुर्गाणि निशातमायुधं
बलानि शूराणि घनाश्च कञ्चुकाः ।
स्वरूपशोभैकफलानि[२] नाकिनां
गणैर्यमाशङ्क्य[३] तदादि चक्रिरे ॥ ४५॥

✡ हिरण्यकशिपु जिस दिशा में जाता था उस दिशा को देवता लोग नमस्कार करते थे—

स सञ्चरिष्णुर्भुवनान्तरेषु[४] यां
यदृच्छयाशिश्रियदाश्रयः श्रियः[५] ।
अकारि तस्यै मुकुटोपलस्खलत्-
करैस्त्रिसन्ध्यं त्रिदशैर्दिशे नमः ॥ ४६॥

✡ नारद जी भगवान् श्रीकृष्ण से कह रहे हैं कि आपके ही द्वारा नृसिंहावतार लेकर हिरण्कशिपु का वध किया गया—

सटाच्छटाभिन्नघनेन बिभ्रता
नृसिंह ! सैंहीमतनुं तनुं त्वया ।
स मुग्धकान्तास्तनसङ्गभङ्गुरैर्
उरोविदारं प्रतिचस्करे नखैः ॥ ४७॥

✡ प्रस्तुत श्लोक में उसी हिरण्यकशिपु का दूसरे जन्म में रावण होने का वर्णन है—

विनोदमिच्छन्नथ दर्पजन्मनो
रणेन कण्डूवास्त्रिदशैः समं पुनः ।
स रावणो नाम निकामभीषणं
बभूव रक्षः क्षतरक्षणं दिवः ॥ ४८॥

✡ अब यहाँ से १८ श्लोकों में (अर्थात् संख्या ६६ श्लोक तक) रावण के आतङ्क का वर्णन है।

नारद जी द्वारा सर्वप्रथम उसके तपःशौर्य का वर्णन किया जा रहा है—

प्रभुर्बुभूषुर्भवनत्रयस्य यः
शिरोऽतिरागाद्दशमं चिकर्तिषुः ।
अतर्कयद्विघ्नमिवेष्टसाहसः
प्रसादमिच्छासदृशं पिनाकिनः ॥ ४९॥

✡ प्रस्तुत श्लोक में रावण द्वारा कैलाश पर्वत के उठाने का वर्णन किया जा रहा है—

समुत्क्षिपन् यः पृथिवीभृतां वरं
वरप्रदानस्य चकार शूलिनः ।
त्रसत्तुषाराद्रिसुतासस्सम्भ्रम-
स्वयङ्ग्रहाश्लेषसुखेन[६] निष्क्रयाम् ॥ ५०॥

[१] 'व्यधीयत' इति पाठान्तरम् ।
[२] 'गुणानि' इति पाठान्तरम् ।
[३] 'गणैस्तमाशङ्क्य' इति पाठान्तरम् ।
[४] 'भुवनान्तराणि' इति पाठान्तरम् ।
[५] 'श्रियाम्' इति पाठान्तरम् ।
[६] 'मुखेन' इति पाठान्तरम् ।

✡ यहाँ पर महर्षि नारद द्वारा रावण के स्वर्ग का लुण्ठन करने का वर्णन किया जा रहा है—

पुरीमवस्कन्द लुनीहि नन्दनं
मुषाण रत्नानि हराऽमराङ्गनाः ।
विगृह्य चक्रे नमुचिद्विषा बली[1]
य इत्थमस्वास्थ्यमहर्दिवं[2] दिवः ॥ ५१॥

✡ अब नारदजी समर में इन्द्र के भागने का वर्णन कर रहे हैं—

सलील-यातानि न भर्तुरभ्रमोर्
न चित्रमुच्चैःश्रवसः पदक्रमम् ।
अनुद्रुतः संयति येन केवलं
बलस्य शत्रुः प्रशशंस शीघ्रताम् ॥ ५२॥

✡ रावण से भयभीत होकर इन्द्र ने सुमेरु पर्वत की शरण ली। 'कौशिक' शब्द के श्लेष से उनके समययापन का वर्णन किया जा रहा है—

अशक्नुवन् सोढुमधीरलोचनः
सहस्ररश्मेरिव यस्य दर्शनम् ।
प्रविश्य हेमाद्रिगुहागृहान्तरं
निनाय बिभ्यद्दिवसानि कौशिकः ॥ ५३॥

✡ प्रस्तुत श्लोक में रावण के कण्ठच्छेद में भगवान् विष्णु के चक्र की भी विफलता वर्णित है—

बृहच्छिलानिष्ठुरकण्ठघट्टनाद्
विकीर्णलोलाग्निकणं सुरद्विषः[3] ।
जगत्प्रभोरप्रसहिष्णु वैष्णवं
न चक्रमस्याक्रमताधिकन्धरम् ॥ ५४॥

✡ अब रावण द्वारा धनाधिपति कुबेर को प्रकम्पित करने का वर्णन किया जा रहा है—

विभिन्नशङ्खः कलुषीभवन्मुहुर्
मदेन दन्तीव मनुष्यधर्मणः ।
निरस्तगाम्भीर्यमपास्तपुष्पकं
प्रकम्पयामास न मानसं न सः ॥ ५५॥

✡ अब रावण द्वारा किये गये वरुण पर विजय का वर्णन किया जा रहा है—

रणेषु तस्य प्रहिताः प्रचेतसा
सरोषहुङ्कारपराङ्मुखीकृताः ।
प्रहर्तुरेवोरगराजरज्जवो
जवेन कण्ठं सभयाः[4] प्रपेदिरे ॥ ५६॥

✡ प्रस्तुत श्लोक में रावण द्वारा यमराज पर विजय वर्णित है—

परेतभर्तुर्महिषोऽमुना धनुर्
विधातुमुत्खातविषाणमण्डलः ।
हतेऽपि भारे महतस्त्रपाभराद्
उवाह दुःखेन भृशानतं शिरः ॥ ५७॥

✡ इस श्लोक में रावण कृत सूर्यविजय का वर्णन है—

स्पृशन् सशङ्कः समये शुचावपि
स्थितः कराग्रैरसमग्रपातिभिः ।
अघर्मघर्मोदकबिन्दुमौक्तिकैर्
अलञ्चकारास्य वधूरहस्करः ॥ ५८॥

✡ प्रस्तुत श्लोक में नारद जी वर्णन कर रहे हैं कि चन्द्रमा भी रावण की सेवा में रहता था—

कलासमग्रेण गृहानमुञ्चता
मनस्विनीरुत्कयितुं पटीयसा ।
विलासिनस्तस्य वितन्वता रतिं
न नर्मसाचिव्यमकारि नेन्दुना ॥ ५९॥

✡ रावण द्वारा गणेश जी के दन्तोत्पाटन का वर्णन किया गया है—

विदग्धलीलोचितदन्तपत्रिका
विधित्सया[5] नूनमनेन मानिना ।
न जातु वैनायकमेकमुद्धृतं
विषाणमद्यापि पुनः प्ररोहति ॥ ६०॥

✡ वायु ने भी रावण की अधीनता स्वीकार कर ली थी —

निशान्तनारीपरिधानधूनन-
स्फुटागसाऽप्यूरुषु लोलचक्षुषः ।
प्रियेण तस्यानपराधबाधिताः
प्रकम्पनेना[6]नुचकम्पिरे सुराः ॥ ६१॥

[1] 'वशी' इति पाठान्तरम् ।
[2] 'महर्निशं' इति पाठान्तरम् ।
[3] 'सुरद्विषाम्' इति पाठान्तरम् ।
[4] 'सभयं' इति पाठान्तरम् ।
[5] 'चिकीर्षया' इति पाठान्तरम् ।
[6] 'प्रभञ्जनेना' इति पाठान्तरम् ।

✡ इस श्लोक में रावण द्वारा अग्निपराजय वर्णित है—

तिरस्कृतस्तस्य जनाभिभाविना
मुहुर्महिम्ना महसां महीयसाम् ।
बभारबाष्पैर्द्विगुणीकृतं तनुस्
तनूनपाद्धूमवितानमाधिजैः ॥ ६२॥

✡ अब रावणकृत नागलोक आदि पर विजय का वर्णन किया जाता है—

[१]परस्य मर्माविधमुज्झतां निजं
द्विजिह्वतादोषमजिह्मगामिभिः ।
तमिद्धमाराधयितुं सकर्णकैः
कुलैर्न भेजे फणिनां भुजङ्गता ॥ ६३॥

✡ रावण के हाथियों द्वारा दिग्गजों को जीतने का वर्णन किया गया है—

तदीयमातङ्गघटाविघट्टितैः
कटस्थलप्रोषितदानवारिभिः ।
गृहीतदिक्कैरपुनर्निवर्तिभिश्
चिराय[२] याथार्थ्यमलम्भि दिग्गजैः ॥ ६४॥

✡ प्रस्तुत श्लोक में रावण द्वारा बन्दी बनाई गई सुराङ्गनाओं के साथ किए गए विलास का वर्णन है—

[३]अभीक्ष्णमुष्णैरपि तस्य सोष्मणः
सुरेन्द्रवन्दी[४]श्वसितानिलैर्यथा ।
सचन्दनाम्भः कणकोमलैस्तथा
वपुर्जलार्द्रापवनैर्न निर्ववौ ॥ ६५॥

✡ रावण ने अपने तेज से षट् ऋतुओं को भी वश में कर रखा था। वे सब गृहस्थ के सदस्य के समान मिलकर रावण की सेवा में संलग्न रहती थीं—

[५]तपेन वर्षाः शरदा हिमागमो
वसन्तलक्ष्म्या शिशिर समेत्य च ।
प्रसूनक्लृप्तिं दधतः सदर्तवः
पुरेऽस्य वास्तव्यकुटम्बितां ययुः[६] ॥ ६६॥

✡ अब दो श्लोकों में नारदजी भगवान् श्रीकृष्ण से कहते हैं कि आपको अपना भावी विनाशक समझते हुए भी रावण ने जानकी को नहीं लौटाया और आपने रामावतार लेकर उसका वध किया —

अमानवं जातमजं कुले मनोः
प्रभाविनं भाविनमन्तमात्मनः ।
मुमोच जानन्नपि जानकीं न यः
सदाऽभिमानैकधना हि मानिनः ॥ ६७॥

स्मरत्यदो[७] दाशरथिर्भवन्भवान्
अमुं वनान्ताद्वनितापहारिणम् ।
पयोधिमाबद्ध[८]चलज्जलाविलं
विलङ्घ्य लङ्कां निकषा हनिष्यति ॥ ६८॥

✡ वही रावण शिशुपाल के रूप में उत्पन्न हुआ है—

अथोपपत्तिं छलनापरोऽपराम्
अवाप्य शैलूष इवैष भूमिकाम् ।
तिरोहितात्मा शिशुपालसञ्ज्ञया
प्रतीयते सम्प्रति सोऽप्यसः परैः ॥ ६९॥

✡ अब तीन श्लोकों में उस शिशुपाल की दुर्जनता का वर्णन किया जा रहा है—

स बाल आसीद्वपुषा चतुर्भुजो
मुखेन पूर्णेन्दुनिभ[९]स्त्रिलोचनः ।
युवा कराक्रान्तमहीभृदुच्चकैर्
असंशयं सम्प्रति तेजसा रविः ॥ ७०॥

✡ किसी देवाराधना के बिना ही शिशुपाल ने अपनी शक्ति से सुरासुरों को अपने अधीन कर लिया था—

स्वयं विधाता सुरदैत्यरक्षसाम्
अनुग्रहावग्रहयोर्[१०]यदृच्छया ।
दशाननादीनभिराद्धदेवता
वितीर्णवीर्यातिशयान् हसत्यसौ ॥ ७१॥

---

[१] क्वचित्संस्करणेषु पद्यमिदं ‘तदीयमातङ्ग.....(६४) इत्यस्मात् परं दृश्यते।

[२] ‘चिरस्य’ इति पाठान्तरम् ।

[३] पद्यमिदं षट्षष्टितमस्य (६६) ‘तपेन..’ इति पद्यस्थाने केषुचित्संस्करणेषूपलभ्यते ।

[४] ‘बन्दी’ इति पाठान्तरम्।

[५] पद्यमिदं पञ्चषष्टितमस्य (६५) ‘अभीक्ष्ण..’ इति पद्यस्थाने केषुचित्संस्करणेषूपलभ्यते ।

[६] ‘दधुः’ इति पाठान्तरम् ।

[७] ‘स्मरस्यदो’ इति पाठान्तरम् ।

[८] ‘विद्ध’ इति पाठान्तरम् ।

[९] ‘रुचि’ इति पाठान्तरम् ।

[१०] ‘ग्रहापग्रहयोर्’ इति पाठान्तरम् ।

✡ कवि शिशुपाल के द्वारा जगत् के उत्पीड़न का वर्णन कर रहा है—

बलावलेपादधुनापि पूर्ववत्
प्रबाध्यते तेन जगज्जिगीषुणा।
सतीव योषित्प्रकृतिः सुनिश्चला[१]
पुमांसमभ्येति[२] भवान्तरेष्वपि ॥ ७२॥

✡ नारदजी भगवान् श्रीकृष्ण से कह रहे हैं कि इस परिस्थिति में शिशुपाल का वध करना आपका कर्तव्य है—

तदेनमु[३]ल्लङ्घितशासनं विधेर्
विधेहि कीनाशनिकेतना[४]तिथिम्।
शुभेतराचारविपक्त्रिमापदो
निपातनीया[५] हि सतामसाधवः ॥ ७३॥

✡ नारदजी शिशुपाल का वध करके इन्द्र को आनन्दित करने की प्रार्थना श्रीकृष्ण से करते हैं—

हृदयमरिवधोदयादुदूढ-[६]
द्रढिम दधातु पुनः पुरन्दरस्य।
घनपुलकपुलोमजाकुचाग्र-
द्रुतपरिरम्भनिपीडनक्षमत्वम् ॥ ७४॥

✡ जब महर्षि नारद इस प्रकार इन्द्र का सन्देश कह कर स्वर्ग को प्रस्थान कर गये तब श्रीकृष्ण ने शिशुपाल के प्रति क्रोध किया जिसका वर्णन कवि कर रहा है—

ओमित्युक्तवतोऽथ शार्ङ्गिण इति
व्याहृत्य वाचं नभस्
तस्मिन्नुत्पतिते पुरः सुरमुना-
विन्दोः श्रियं बिभ्रति।
शत्रूणामनिशं[७] विनाशपिशुनः
क्रुद्धस्य चैद्यं प्रति[८]
व्योम्नीव भृकुटिच्छलेन वदने
केतुश्चकारास्पदम् ॥ ७५॥

इति श्रीमाघभट्टविरचिते
शिशुपालवधमहा[९]काव्ये
कृष्णनारदसम्भाषणं[१०] नाम प्रथमः सर्गः॥

****

[१] 'सुनिश्चिता' इति पाठान्तरम्।
[२] 'पुमांसमन्वेति' इति पाठान्तरम्।
[३] 'तमेवमु-' इति पाठान्तरम्।
[४] 'निवेशना' इति पाठान्तरम्।
[५] 'विपादनीया' इति पाठान्तरम्।
[६] 'दुपोढ', 'दवाप्त' इति वा पाठान्तरौ।
[७] 'शत्रूणां नितराम्' इति पाठान्तरम्।
[८] 'कर्तुं / कर्तुर्मतिं संयति', 'कर्तुं / कर्तुर्मतिं संयुगे' इति च पाठान्तरौ।
[९] क्वचित्संस्करणेषु 'महा' इति नास्ति।
[१०] 'नारदागमनविसर्जनो' इति पाठान्तरम्।